साधकों का
मासिक प्रेरणा

वार्षिक शुल्क रु. 30/-
आजीवन शुल्क रु. 500/-

बुद्धवर्ष 2554, कार्तिक पूर्णिमा, 21 नवंबर, 2010 वर्ष 40 अंक 5

For Patrika in various languages, visit: http://www.vridhamma.org/Newsletter_Home.aspx

धम्मवाणी

मनोपुब्बङ्गमा धम्मा, मनोसेट्ठा मनोमया।
मनसा चे पसन्नेन, भासति वा करोति वा।
ततो नं सुखमन्वेति, छायाव अनपायिनी॥
-- धम्मपद- २

मन सभी धर्मों (प्रवृत्तियों) का अगुआ है, मन ही प्रधान है, सभी धर्म मनोमय हैं। जब कोई व्यक्ति अपने मन को उजला रख कर कोई वाणी बोलता है, अथवा शरीर से कोई कर्म करता है, तब सुख उसके पीछे ऐसे हो लेता है जैसे कभी संग न छोड़ने वाली छाया संग-संग चलने लगती है।

उद्बोधन!

आचार्य स्वयं शिविर २००९ -- मैत्री निर्देश

मेरे प्यारे धर्मपुत्रो, धर्मपुत्रियो!

तुमने पंद्रह दिनों तक गंभीर तपस्या करके अपना तो लाभ लिया ही, वातावरण में भी धर्म की तरंगें भर दी, इसका लाभ मुझे भी हुआ। मैं इन पंद्रह दिनों में जैसे गंभीरतापूर्वक तपना चाहिए था, वैसे नहीं तप पाया। शारीरिक व्याधियों के कारण और उनसे संबंधित उपचार के कारण, जैसे तपना चाहिए था, उससे वंचित रहा। लेकिन जो समय मिला, उसमें गंभीरतापूर्वक तपा।

सबसे बड़ी बात यह हुई कि मेरे सैकड़ों धर्मपुत्रों, धर्मपुत्रियों ने जो गंभीर तपस्या की और उससे वातावरण को जो लाभ हुआ, उसका लाभ मुझे भी मिला। जीवन में इसी प्रकार तपते रहो, पकते रहो, धर्म में आगे बढ़ते रहो। जिन्होंने अब तक केवल दस दिन का ही शिविर किया, वे देखेंगे कि दस दिनों का शिविर तो बच्चों का-सा है। बीस दिन का शिविर करना चाहिए। अब तो बीस दिन के शिविर की एक झांकी ही मिली। तो देखा होगा कि दस दिन के शिविर से यह कितना गंभीर है।

और इससे आगे जाकर जब तीस दिन का शिविर करोगे तो धर्म की गहराइयों तक पहुँचोगे। और आगे बढ़ोगे – पैंतालीस दिन, साठ दिन – अरे, तो कहना ही क्या? तो अब तो पहले जिन लोगों ने बीस दिन का शिविर नहीं किया है, वे यह निर्णय करके जायें कि हमें बीस दिन का शिविर तो करना ही है। धर्म को अनुभूति के स्तर पर समझना है। पुस्तकें पढ़ करके, प्रवचन सुन करके कोई कहे कि मैं समझ गया तो बावला आदमी है, पागल है। क्या समझ गया रे? तूने अनुभव किया ही नहीं और समझ गया? शिविरों में इसीलिए शामिल होते हैं कि अनुभव से समझें। अनुभव से समझें और फिर उसे जीवन में उतारें। केवल बुद्धि से समझ कर रह गया, भावावेश से समझकर रह गया तो जीवन में उतार ही नहीं पायेगा। अनुभव से समझा है तो प्रयत्न करते-करते जीवन में उतारने लगेगा।

दो महत्त्वपूर्ण अंग हैं विपश्यना के -- उनमें विशेष रूप से पकना चाहिए। एक तो अपने शरीर पर होने वाली संवेदनाओं को बहुत स्पष्ट रूप से जानें, उनके अनित्य स्वभाव को समझें और समता में स्थित रहें। संवेदनाओं को अनुभव से जानना विपश्यना का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। और दूसरा महत्त्वपूर्ण अंग जो आज सीखा-- मैत्री भावना, मंगल कामना! अरे, जीवन में न जाने कितने उतार-चढ़ाव आते रहते हैं, अनचाही-मनचाही होती रहती है। उस समय अपने आपको जांचकर देखना है। मान लो किसी ने तुम्हें गाली दी, अपशब्द कहे, तुम्हारे बारे में ऐसी बातें कह दी जो सही नहीं है, तो देखो क्या प्रतिक्रिया हुई? अगर तुमने भी बदले में गाली निकाली और तुमने भी बदले में क्रोध किया, द्वेष किया, दुर्भावना की, तो अभी कच्चे हो। अच्छा, नहीं किया। भले वाणी से कोई अपशब्द नहीं कहा लेकिन मन में तो दुर्भावना जागी ही। मन में दुर्भावना जागी, क्रोध जागा, द्वेष जागा। तब क्या करना है? समझदार साधक तुरंत देखना शुरू कर देगा -- कैसी संवेदना है? बड़ी अप्रिय होगी। उस समय की संवेदना बड़ी अप्रिय होगी। तब होश जागेगा -- मैंने दुर्भावना मेरे दुशमन के प्रति जगायी, उसको दुःखी करने के लिए; अरे, दुःखी मैं होने लगा! दुर्भावना जगाते ही मैं कितना व्याकुल हो गया! यह संवेदना कहेगी -- तू बहुत व्याकुल हो गया रे!

अगला कदम -- होश आयेगा, उसी व्यक्ति के प्रति जिसने तुम्हारा अपमान किया, तुम्हें अपशब्द कहे, तुम्हें गालियां दीं, उसी व्यक्ति के प्रति तुम्हारे मन में मैत्री जागने लगे -- तेरा मंगल हो! तेरा कल्याण हो! तुझे अपने दुष्कर्म का दुष्फल न भोगना पड़े!

तब देखोगे, जैसे ही मैत्री जागी, भीतर बड़ी सुखद संवेदना चलने लगी! जैसे ही दुर्भावना जगायी, शरीर में बड़ी दुःखद संवेदना! मैत्री जगायी, सुखद संवेदना! अरे, तो हम दुर्भावना क्यों जगायेंगे? अपने आपको दुःखी क्यों बनायेंगे? संसार में एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जो अपने आपको दुःखी बनाना चाहता है। नादानी में, नासमझी में अपने को दुःखी बनाता रहता है। विपश्यी साधक इस रास्ते पर चलते हुए ऐसी नादानी नहीं करेगा।

बस, ये दो बातें खूब बांधकर रखो - कि शरीर की संवेदनाओं को नहीं भूलना है, जैसी भी परिस्थिति आयी। किसी अन्य ने दुर्भावना पैदा की तो हमारे में क्या प्रतिक्रया हुई? गलत प्रतिक्रया हुई तब कैसी संवेदना हुई हमारी? अप्रिय संवेदना हुई तो तुरंत मैत्री में बदलो। अप्रिय संवेदना को प्रिय संवेदना में बदलो। बड़ा मंगल होगा।

धर्म के रास्ते आये हैं तो धर्म जीवन में उतरे। प्रयत्न करते रहें। यह नहीं कि अब यह पंद्रह दिन का शिविर कर लिया तो इतने पक गये कि अब कोई गलती होगी ही नहीं। होगी तो हमें चेतावनी देने के लिए - अरे, यह गलती हुई ना! अब नहीं करेंगे। गलती हुई ना! अब नहीं करेंगे। बस, आगे बढ़ते ही जाओगे, बढ़ते जाओगे।

खूब मंगल हो! सबका मंगल हो! खूब कल्याण हो! सबका कल्याण हो!

कल्याणमित्र, सत्यनारायण गोयन्का

आओ, धर्म को समझें

२६०० वर्ष पूर्व के भारत की जनभाषा पालि में जिसे 'धम्म' कहा गया, आज उसे 'धर्म' कहते हैं। उन दिनों के भारत में इस शब्द का अर्थ बहुत व्यापक था। समय बीतते-बीतते यह अर्थ संकुचित और रूढ़ होता चला गया। आज के भारत में तो बहुत अंशों में इसके अर्थ का अनर्थ ही हो गया।

उन दिनों धर्म कहते थे मन के विषय को। पांचों इंद्रियों के अपने अलग-अलग विषय हैं। आंख का विषय है रूप, कान का शब्द, नाक का गंध, काया, यानी त्वचा का स्प्रष्टव्य पदार्थ। इन पांचों के अतिरिक्त एक और इंद्रिय है जो इनकी अपेक्षा अधिक सूक्ष्म है, अधिक बलवान है और वह है मन की इंद्रिय। उन दिनों की भाषा में मन को चित्त भी कहते थे, विज्ञान भी कहते थे। चित्त-इंद्रिय के विषय को चैतसिक, यानी चित्त-वृत्तियां कहते थे और चित्त-वृत्तियों को ही धर्म कहते थे। **धारेती'ति धम्मो**-- धारण करे सो धर्म। चित्त जो धारण करे वह धर्म। चित्त विभिन्न चित्त-वृत्तियां धारण करता है। अतः सभी चित्तवृत्तियां धर्म कहलायीं।

चित्त-वृत्तियां बावन प्रकार की होती हैं। इनमें से कुछ अच्छी हैं, कुछ बुरी; कुछ हितकारिणी हैं, कुछ अहितकारिणी। इसलिए उन दिनों की भाषा में इस प्रकार का कथन प्रचलित था – जैसे कि कुशल-धर्म, अकुशल-धर्म। कुशल-धर्म माने वह चित्त-वृत्ति जिसे धारण करने में हमारा कुशल-मंगल समाया हुआ है और अकुशल-धर्म माने वह चित्त-वृत्ति जिसे धारण करने में हमारा अकुशल-अमंगल समाया हुआ है। इसी भाव में ऐसे शब्द प्रचलित थे, जैसे – पुण्य-धर्म, पाप-धर्म। पुण्य-धर्म वह जिसके धारण करने से चित्त पुण्यमय, यानी पुनीत होता है और पाप-धर्म वह जिसके धारण करने से चित्त पापमय, यानी मैला होता है। ऐसे ही कहा जाता था – शुक्ल-धर्म, कृष्ण-धर्म। शुक्ल-धर्म वह जिसे धारण करने से चित्त शुक्ल, स्वच्छ होता है और कृष्ण-धर्म वह जिसे धारण करने से चित्त कलुषित, मैला होता है। इसी प्रकार कहा जाता था – आर्य-धर्म, अनार्य-धर्म। आर्य-धर्म वह जिसे धारण करने से कोई भी व्यक्ति आर्य, यानी शुभेच्छ, सज्जन बन जाता है और अनार्य-धर्म वह जिसे धारण करने से कोई भी व्यक्ति अनार्य, यानी मलेच्छ, दुर्जन बन जाता है।

उपरोक्त व्याख्या को स्पष्ट करने के लिए धर्म की एक और परिभाषा भी प्रचलित थी। धर्म कहते थे गुण को, स्वभाव को, प्रकृति को। गुण, धर्म, स्वभाव, प्रकृति – ये उन दिनों के पर्यायवाची शब्द थे, समानार्थक शब्द थे। जिस चित्तवृत्ति का जो स्वभाव है, वही उसका धर्म कहलाया। कोप, क्रोध, द्वेष, दुर्भावना जैसी चित्तवृत्तियां अपने स्वभाववश चित्त को मैला कर देती हैं, तनाव से भर देती हैं, व्याकुल कर देती हैं, उसका अमंगल करती हैं, अकुशल करती हैं; इसीलिए पाप-धर्म, अकुशल-धर्म, कृष्ण-धर्म, अनार्य-धर्म कहलायीं। यों ही मैत्री, करुणा, स्नेह, सद्भावना जैसी चित्तवृत्तियां अपने स्वभाववश चित्त को पुनीत कर देती हैं, उसे सुख-शांति और सौमनस्यता से भर देती हैं, उसका कुशल करती हैं, मंगल करती हैं इसीलिए पुण्य-धर्म, कुशल-धर्म, शुक्ल-धर्म, आर्य-धर्म कहलायीं।

यों हम देखते हैं कि उन दिनों अच्छी बुरी, सभी प्रकार की चित्तवृत्तियों के लिए धर्म शब्द का प्रयोग होता था, क्योंकि सभी चित्त-वृत्तियां चित्त के द्वारा धारण की जाती हैं। धारण करे सो धर्म – इस व्याख्या के अनुसार दोनों ही धर्म। परंतु आगे चल कर उन्हीं चित्त-वृत्तियों को धारण करने को धर्म कहा जाने लगा जो कि सुखदा हैं, शांतिदा हैं और मंगलकारिणी हैं। उन्हें धारण करना चाहिए। यह करणीय है, यह कर्तव्य है। अतः धर्म का एक अर्थ प्रचलित हुआ – कर्तव्य। यह हमारा धर्म है, यानी हमारा कर्तव्य है। और जो अकरणीय है, अकर्तव्य है वह अधर्म है। धर्म और अधर्म की यह कल्याणी व्याख्या किसी दार्शनिक अंधविश्वास के आधार पर स्थापित नहीं हुई, किसी सांप्रदायिक मान्यता के आधार पर स्थापित नहीं हुई; बल्कि अनुभवजन्य शुद्ध वैज्ञानिक आधार पर स्थापित हुई थी।

निकम्मी, निरर्थक और झगड़े-फसाद फैलाने वाली कल्पनाजन्य दार्शनिक मान्यताओं को एक ओर रख कर शरीर और चित्त के पारस्परिक संबंधों का सुवैज्ञानिक ढंग से अनुसंधान करने वाला एक तटस्थ विपश्यी साधक जब स्वानुभूति के स्तर पर सच्चाई का निरीक्षण करता है, तब देखता है कि वह जब-जब दूषित वृत्तियां धारण करता है तब-तब स्वयं तो तत्काल संतापित हो ही जाता है, आस-पास के वातावरण में भी अपने तनाव की तरंगें भर देता है। उस समय उस वातावरण के संपर्क में जो व्यक्ति आता है, वह बेचैनी महसूस करने लगता है। वह इस सच्चाई को अनुभूति के स्तर पर जानने लगता है कि हम अपने विकारजन्य मनोसंताप से दूसरों के मन को भी संतापित करते हैं। दूषित चित्तवृत्तियों को धारण कर स्वयं भी व्याकुल होते हैं, औरों को भी व्याकुल करते हैं। अतः स्पष्ट हुआ कि यह अकरणीय है, याने अधर्म है।

साधक यह भी देखता है कि जिस समय मन विकारों से विकृत होता है उस समय वाणी और शरीर से जो काम किया जाता है, वह दूषित ही होता है, अकुशलजनक ही होता है – अपने लिए भी और समाज के लिए भी। अतः वाणी और शरीर के सभी दुष्कर्म अकरणीय हैं, अधर्म हैं।

साधक यह भी देखता है कि चित्त जब-जब विकार-विमुक्त रहता है तब-तब दुःखविमुक्त रहता है। जब-जब विकार-विमुक्त चित्त मैत्री, करुणा सद्भावना जैसे गुणों से भर जाता है, तब-तब वह स्वयं जो सुख शांति महसूस करता है वह आस-पास के वातावरण में भी समाने लगती है। जो उस सुख-शांतिमय वातावरण के संपर्क में आता है वह भी सुख-शांति महसूस करने लगता है। अतः समझने लगता है कि केवल अपनी ही नहीं बल्कि सब की सुख-शांति के लिए चित्त को विकारों से विमुक्त रखना और उसे सद्गुणों से भर लेना ही करणीय है, यही धर्म है। वह यह भी देखता है कि चित्त जब विकार-विमुक्त होता है और सद्गुणों से भर उठता है तब शरीर और वाणी के जो भी कर्म होते हैं, वे सत्कर्म ही होते हैं जो कि अपने लिए भी कल्याणकारी होते हैं, औरों के लिए भी कल्याणकारी। अतः वाणी और शरीर के सभी सत्कर्म करणीय हैं, कर्तव्य हैं, यानी धर्म हैं। इस प्रकार करणीय को धर्म कहा जाने लगा, अकरणीय को अधर्म। या यों कहें कि धर्म कर्तव्य है और अधर्म अकर्तव्य।

इस प्रकार स्वानुभूति के आधार पर जाने गये तथ्यों के आधार पर ही धर्म की सही व्याख्या की गयी। पुरातन भारत में ऋत को, यानी निसर्ग के नियमों को धर्म कहते थे; प्रकृति को, स्वभाव को धर्म कहते थे। जो अपना स्वभाव, यानी अपना लक्षण धारण करे सो धर्म। उसे ही **धम्मनियामता,** यानी धर्म-नियम और **धम्मता,** यानी

धर्मता कहते थे। धर्म शब्द के इस सही अर्थ की गूंज आज भी कहीं-कहीं सुनने को मिल जाती है। जब हम कहते हैं कि अग्नि का धर्म है जलना और जलाना, बर्फ का धर्म है शीतल होना और शीतल करना, सूरज का धर्म है प्रकाश और उष्णता प्रजनन करना, चंद्रमा का धर्म है प्रकाश और शीतलता प्रजनन करना। ऐसा न हो तो अग्नि अग्नि नहीं, बर्फ बर्फ नहीं, सूरज सूरज नहीं, चंद्रमा चंद्रमा नहीं। क्योंकि यही उनका नैसर्गिक धर्म है, यही उनका स्वभाव है जिसे वे धारण करते हैं। इसी प्रकार जब हम कहते हैं कि संसार के सभी प्राणी, सभी वस्तुएं जराधर्मा हैं, मरणधर्मा हैं; तो इसका अर्थ है कि यही उनका स्वभाव है, उनकी प्रकृति है जिन्हें वे धारण करते हैं। इसी प्रकार कोप, क्रोध, द्वेष, दुर्भावना आदि मन के दुर्गुणों का धर्म-स्वभाव है व्याकुल होना, व्याकुल करना। मैत्री, करुणा, स्नेह-सद्भावना आदि मन के सद्गुणों का स्वभाव है – सुखी शांत होना, सुखी शांत करना। ऐसा न हो तो दुर्गुण दुर्गुण नहीं, सद्गुण सद्गुण नहीं। मन के दुर्गुणों और सद्गुणों का यह नैसर्गिक स्वभाव ही धर्म है। दुर्गुण धारण कर दुःखी हो जाना, सद्गुण धारण कर सुखी हो जाना यह धर्म-नियम किसी एक जाति विशेष पर अथवा वर्ण, वर्ग, समाज, संप्रदाय विशेष पर ही लागू नहीं होता है। इसीलिए कहा गया कि धर्म सार्वजनीन है। हिंदू हो या बौद्ध, ब्राह्मण हो या शूद्र, भारतीय हो या अमरीकी धर्म के नियम सब पर एक जैसे लागू होते हैं। धर्म सार्वदेशिक है। भारत हो या जापान, रूस हो या अमेरिका सभी स्थानों पर धर्म के नियम एक जैसे लागू होते हैं। धर्म सार्वकालिक है। भूतकाल में भी यही धर्म-नियम थे, आज भी यही हैं और भविष्य में भी यही रहेंगे। संसार में और सब कुछ बदलते रहता है, पर यह नैसर्गिक धर्म-नियम नहीं बदलते। इसीलिए धर्म को सनातन कहा गया। शाश्वत नैसर्गिक नियम ही सनातन धर्म है।

आग से आग बुझती नहीं, बढ़ती है। यह सनातन धर्म है। बैर से बैर मिटता नहीं, बढ़ता है। यह सनातन धर्म है। आग पानी से बुझती है, यह सनातन धर्म है। बैर मैत्री से मिटता है, यह सनातन धर्म है। मनोविकार से व्याकुलता बढ़ती है, यह सनातन धर्म है। विकार-विहीनता से व्याकुलता मिटती है, यह सनातन धर्म है, आदि, आदि।

इसीलिए कहा गया **एस धम्मो सनन्तनो**– यही सनातन धर्म है। प्रकृति के सनातन नियमों पर आधारित हो तो ही सनातन धर्म है। सनातन धर्म की इस नैसर्गिक व्याख्या को भुला कर हम इस भ्रम में पड़ गये कि पौराणिक मान्यताओं को मानना और पौराणिक कर्मकांडों का संपादन करना सनातन धर्म है और इसके विपरीत वैदिक मान्यताओं को मानना और वैदिक कर्मकांडों का संपादन करना आर्यसमाजी धर्म है। इसी प्रकार धर्म की सही सार्वजनीन व्याख्या को भुला कर हमने इसे संप्रदाय का पर्यायवाची शब्द बना दिया और हिंदू-धर्म, बौद्ध-धर्म, जैन-धर्म, सिक्ख-धर्म, मुस्लिम-धर्म, ईसाई-धर्म आदि के रूप में इसका भ्रामक प्रयोग करने लगे। धर्म और सनातन धर्म का यह अर्वाचीन प्रचलित प्रयोग कितना दूषित है, कितना भ्रांतिजनक है और परिणामतः कितना हानिकारक हो गया है! इसे समझें और धर्म का सही सार्थक उपयोग कर अपना भी मंगल साध लें तथा औरों के मंगल में भी सहायक बन जायँ। यही करणीय है। यही कल्याणपद है।

कल्याणमित्र,

सत्यनारायण गोयन्का

(विपश्यना वर्ष २३, अंक १०, मार्च ९४ से साभार)

पगोडा में पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य में एक-दिवसीय शिविर

सयाजी ऊ बा खिन दिवस १६ जनवरी, रविवार (१९ जन. बुधवार के बदले)

समयः प्रातः ११ बजे से अपराह्न ४ बजे तक, **'ग्लोबल विपश्यना पगोडा'** के बड़े धम्मकक्ष (डोम) में हजारों साधकों और **पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य** में **एक-दिवसीय** शिविर का लाभ उठाएं। कृपया ध्यान दें कि इस विशाल शिविर की व्यवस्था सुचारुरूप से हो और आपको किसी प्रकार की असुविधा न हो, इसलिए **बिना बुकिंग कराये** न आएं।

बुकिंग संपर्क : मोबा. (1) 0 98928 55692, (2) 0 98928 55945,
फोन नं.: 022- 2845-1182, 2845-1170; New- 022-33747501/02.
(फोन बुकिंग समय : प्रातः ११ से सायं ५ तक, प्रतिदिन)
ईमेलः Registration: global.oneday@gmail.com;
Online booking: www.vridhamma.org

विपश्यी साधकों के लिए विशेष तीर्थ-यात्रा ट्रेन

भारतीय रेलवे ने **महापरिनिर्वाण एक्सप्रेस** नामक एक विशेष वातानुकूलित रेलगाड़ी चलायी है जो बुद्ध से संबंधित पवित्र स्थलों – **लुम्बिनी, बोधगया, सारनाथ, श्रावस्ती, राजगीर तथा कुशीनगर** आदि स्थानों की सितंबर से मार्च तक माह में दो बार **८ दिवसीय** तीर्थ यात्रा कराती है। **विशेष विपश्यी ट्रेन**-- १२-२ से १९-२-२०११.

ग्लोबल विपस्सना फाउंडेशन ने विपश्यी साधकों के लाभार्थ आई.आर.सी.टी.सी. से २१% की विशेष छूट का प्रबंध किया है। विपश्यी साधकों के लिए दो बार सामूहिक साधना का भी प्रबंध होगा। लेकिन यह तभी संभव हो पायगा जब कि एक ट्रेन पर कम से कम दस विपश्यी साधक हों। पहली सामूहिक साधना बोधगया के बोधिवृक्ष के नीचे और दूसरी कुशीनगर में। सामूहिक साधना का समय मंदिर बंद होने के बाद, ताकि आने-जाने वाले यात्रियों से शांति-भंग न हो। और परिसर में कोई अन्य कार्यक्रम न हो। **विस्तृत जानकारी और टिकट बुकिंग के लिए संपर्कः--** श्री हेमंत शर्मा +९१-९७१७६४४७९८ या श्री इजहार आलम ९७१७६३५९१२. आई.आर.सी.टी.सी., ग्राउंड फ्लोर, एस.टी.सी. बिल्डिंग १, टॉलस्टोय मार्ग, नई दिल्ली ११०००१. फोन ०११-२३७०-११००, या २३७०-११०१. इमेलः arunsrivastava@irctc.com; or buddhisttrain@irctc.com; **website:** www.railtourismindia.com/buddha

---

इंटरनेट पर हिंदी वेबसाइट व हिंदी पत्रिका, मोबाइल पर भी

प्रसन्नता का विषय है कि **इंटरनेट पर** विपश्यना-संबंधी सभी प्रकार की जानकारी निम्न वेबसाइट पर हिंदी में भी उपलब्ध है और इसी प्रकार **"स्मार्ट"** फोन रखने वाले, सारी जानकारियां अपने मोबाइल पर भी देख सकते हैं। क्रमशः इस प्रकार देखें –
websites: www.hindi.dhamma.org; www.mobile.dhamma.org

सहायक आचार्य वार्षिक सम्मेलन, मुंबई में

जैसे कि हर वर्ष विश्वभर के सहायक आचार्यों का वार्षिक सम्मेलन धम्मगिरि पर होता आया है। इस वर्ष का वार्षिक सम्मेलन भी इगतपुरी में ही होने की उद्घोषणा की जा चुकी थी। परंतु चूंकि पूज्य गुरुदेव इतनी दूर आ नहीं सकते परंतु धम्मपत्तन, गोराई (ग्लोबल पगोडा) पर वे आ सकते हैं। उनकी इच्छा है कि इस वर्ष का सम्मेलन गोराई में हो ताकि वे वहां पर विपश्यना को चिरस्थाई रखने के बारे में आवश्यक निर्देश सब को एक साथ दे सकें और सहायक आचार्यों को उनके सान्निध्य का लाभ भी मिल सके।

इस प्रकार यह सम्मेलन १७ दिसंबर की सायं ५ से ७ बजे के बीच पंजीयन-कार्यक्रम पूरा होने के बाद आरंभ होगा और १९ की दोपहर तक चलेगा। सभी आचार्यों के निवासादि की समुचित व्यवस्था धम्मपत्तन पर तथा समीपस्थ 'केशव-सृष्टि' नामक संस्थान में की गयी है। अतः सभी सहायक आचार्यों से निवेदन है कि वे कृपया अपनी बुकिंग **धम्मगिरि** पर, **दीर्घशिविर-व्यवस्थापक** के पास कराकर ही, अवश्य आएं।

जो स. आचार्य ४५-दिवसीय शिविर में होंगे वे धम्मगिरि से सीधे धम्मपत्तन आ जायँ और जो ६०-दिवसीय शिविर के लिए आ रहे हैं वे उसके पूर्व अपना कार्यक्रम इस प्रकार बनायें कि इस सम्मेलन में भाग लेकर, फिर धम्मगिरि जाने का कष्ट करें। (**बस के लिये बुकिंग** कराने पर १९ को दोपहर के भोजन के बाद धम्मगिरि जाने के लिए बस की व्यवस्था की जा सकेगी।)

Registered No. NSK/46/2009-2011

WPP Postal License No. AR/Techno/WPP-05/2009-2011

विपश्यना साहित्य और सीडीज की ऑनलाइन खरीददारी
Online Purchase (Books and CDs)

विपश्यना संबंधी सारा साहित्य, सीडीज और डीवीडीज, सभी प्रमुख भाषाओं में नेट पर उपलब्ध हैं। साधक इन्हें ऑनलाइन खरीद सकते हैं। नीचे लिखे वेबसाइट को खोलते ही विपश्यना संबंधी जानकारियों की भरपूर सूची और सामग्री दिखायी देगी। किसी प्रकार की सूची देखना है या कोई खरीददारी करनी है, वहां क्लिक करें और वहां के निर्देशानुसार (फालो) करते जायँ।

कुछ साहित्य और विपश्यना पत्रिकाएं आदि (हिंदी, अंग्रजी तथा अन्य भाषाओं में भी) मुफ्त उपलब्ध हैं। उनकी **पीडीएफ (PDF)** फाइल को ऑनलाइन पढ़ सकते हैं, प्रिंट कर सकते हैं या किसी को उसकी लिंक भेज सकते हैं। इंटरनेट की सुविधा का लाभ उठाएं और अपने तथा अनेकों के मंगल में सहायक बनें! मंगल हो! Website: http://www.vridhamma.org/

पद-च्युति की महत्त्वपूर्ण सूचना

बैंगलोर की श्रीमती आशा गुप्ता और सुश्री नीता शाह को इस परंपरा की सहायक आचार्या के पद से मुक्त कर दिया गया है। अब ये दोनों बाल-शिविर, कोई अन्य विपश्यना-शिविर तथा सामूहिक साधना आदि का संचालन नहीं कर सकतीं।

नये उत्तरदायित्व

आचार्य

१. श्री रमणिकलाल मेहता, कच्छ धम्मसिंधु के आचार्य की सहायता
2-3. Mr. Dennis & Mrs. Louie Austin, *USA. To serve Dhamma Pakāsa (Illinois)*
4-5. Mr. Roger & Mrs. Mersedeh Gosselin, *Canada. To serve spread of Dhamma in Canada and among expatriate Iranian community*

वरिष्ठ सहायक आचार्य

1-2. Mr. Gregory & Mrs. Patricia Calhoun, *USA*
3-4. Mr. Brett & Mrs. Maria Morris, *USA*
5-6. Mr. Jeff & Mrs. Jill Glenn, *USA*

नव नियुक्तियां

सहायक आचार्य

1. Mr. Chen Yue-Zhang, *People's Republic of China*
2. Mrs. Wang Hui, *People's Republic of China*
3. Mr. Michael Shaw, *Australia*
4. Mrs. Naomi Apel, *Israel*

बालशिविर शिक्षक

१. सुश्री शीतल बाविसकर, भोपाल
२. श्रीमती दुर्गा खोब्रागडे, भोपाल
३. सुश्री पारा शक्ति राजभट्ट, भोपाल
४. डॉ. दीपक शेंडे, छिंदवाड़ा
५. श्री शरद चांडक, भोपाल
६. श्री हेमंत कुमार पाटीदार, भोपाल
७. श्रमती नम्रता पारिख, नाशिक
८. श्री धनराज पवार, भोपाल
९. श्रीमती विनीता रामटेके, भोपाल
१०. श्री महेश धायपुल्ले, कोप्पल, कर्नाटक.
11. Mrs. Supannee Punnanon, *Thailand*

दोहे धर्म के

धर्म जगत का ईश है, धर्म ब्रह्म भगवान।
धर्म सदा रक्षा करे, धर्म बड़ा बलवान॥

धर्म हमारा ईश है, धर्म हमारा नाथ।
हम अनाथ कैसे हुए? धर्म हमारे साथ॥

धर्म सदृश रक्षक नहीं, धर्म सदृश ना ढाल।
धर्म विहारी का सदा, धर्म रहे रखवाल॥

रक्षा कर तू धर्म की, यदि रक्षा की चाह।
सत्य धर्म को छोड़ कर, और न शरण पनाह॥

जीवन में झंझा उठे, आंधी बने बयार।
शरण ग्रहण कर धर्म की, अन्य शरण निस्सार॥

छाया के पीछे लगा, जिसमें तत्त्व न सार।
राख आसरा धर्म का, अन्य सभी बेकार॥

केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा०) लिमिटेड
८, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई- 400 018
फोनः 2493 8893, फैक्सः 2493 6166
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

धरम धरम तो सब कवै, पण जाणै ना कोय।
जो चित्त नै निरमळ करै, धरम जाणिये सोय॥

बाहर भीतर एक रस, सरल स्वच्छ ब्योहार।
कथनी करणी एक सी, यो हि धरम रो सार॥

प्रग्या सील समाधि ही, सुद्ध धरम रो सार।
काया वाणी चित्त रा, सुधरै सै ब्योहार॥

याहि धरम री परख है, यो हि धरम रो माप।
जीवन मँह धारण कर्‌यां, दूर हुवै संताप॥

सील धरम रो आंगणो, ध्यान धरम री भींत।
प्रग्या तो छत धरम री, मंगळ भुवन पुनीत॥

पाली संस्क्रित हीबरू, अरबी बोले कोय।
भासा होवै भिन्न पर, भाव धरम रो होय॥

एक साधक
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादकः राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-422403, दूरभाष : (02553) 244086, 244076.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, 69- बी रोड, सातपुर, नाशिक-422007. **बुद्धवर्ष** 2554, **कार्तिक पूर्णिमा,** 21 **नवंबर, 2010**

वार्षिक शुल्क रु. **30/-,** US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. **500/-,** US $ 100. **'विपश्यना' रजि. नं. 19156/71. Registered No. NSK/46/2009-2011**

Licensed to post w**ithout Prepayment of postage** -- WPP Postal License No. AR/Techno/WPP-05/2009-2011
Posting day- **Purnima of Every Month,** Posted at **Igatpuri-422403,** Dist. Nashik (M.S.)

If not delivered please return to:-
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - 422403
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
फोन : (02553) 244076, 244086, 243712, 243238.
फैक्स : (02553) 244176
Email: info@giri.dhamma.org
Website: www.vridhamma.org